पत्रिका

संयुक्त अंक

वर्ष–14 जनवरी – जून –2004 अंक – 1,2
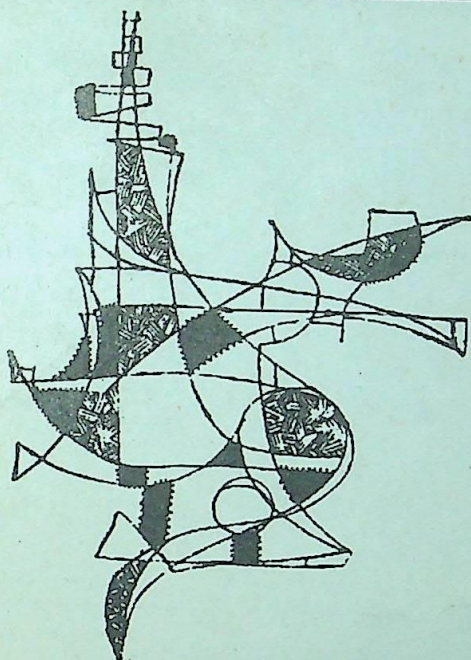
पत्रिका

(त्रैमासिक)

अंक — 1,2
वर्ष — '14

मुख्य सम्पादक :-
डॉ० ओम प्रकाश गुप्त

सम्पादक :-
शेख मोहम्मद कल्याण

संपादन - संचालन अवैतनिक व अव्यवसायिक। रचनाओं का दायित्व लेखकों पर। संपादकीय सहमति अनिवार्य नहीं।

अनुक्रम

सम्पादकीय

कविताएँ

- एक और कलिंग तक — स्वामी अंतर नीरव — 4
- चुटकी भर भाग्य — कुलविंदर सिंह मीत — 5
- मेरी कलम/मोर और मदारी — सतीश विमल — 6
- चपरासी — डॉ० संदीप कुमार मिश्र — 26
- मोड़/माँ — डॉ० गिरीश काशिद — 27
- अंजुरि भर आकाश — निदा नवाज़ — 40
- लेकिन अकस्मात्/बमों से खेलना/ इन दिनों में अब — राज कुमार कुम्भज — 35
- वेदना/किताब *(मूल पंजाबी कविताओं का हिन्दी अनुवाद)* — *रविन्द्र भट्टल* अनु०-श्रीमती मनु शर्मा 'सोहल' — 36

आलेख

- राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की राष्ट्रीय चेतना — कपिल अनिरुद्ध — 18
- वर्तमान परिवेश में हिन्दी का स्थान - एक आकलन — डॉ० संदीप कुमार मिश्र — 29

कहानियाँ

- अन्तिम पड़ाव — शकुन्त दीपमाला — 7
- अस्तित्व का भ्रम — प्रेम सुभाष 'प्रेम' — 22

उर्दू जगत से

- दो ग़ज़लें — लियाक़त जाफ़री — 17
- ख़िज़ाँ से पहले की सब रुतों का.......... — डॉ० दरख़्शाँ अंदराबी — 15

नव हस्ताक्षर

- अनामिका — नवजीत कौर — 11
- सरिता — वरुण शर्मा — 12
- ख़राबी/सफ़ेद साड़ी (दो लघु कथाएँ) — परमप्रीत कौर रिंपी — 13

सम्पादकीय

कविता का सामाजिक परिप्रेक्ष्य

समाज की परिकल्पना करते ही हमारे मस्तिष्क में विभिन्न सभ्यताएँ एवं संस्कृतियाँ उभर आती हैं। मानव सभ्यता की विशालता और धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक तथा कलात्मक मूल्यों की भिन्नता भी हमें भव्यता का एहसास करवाती है। विभिन्न सभ्यताओं की सामाजिक व्यवस्था, धार्मिक आस्था, राजनैतिक गतिविधियाँ, आर्थिक दशा तथा कलात्मक सृजनात्मकता हमें काल तथा रहन-सहन का बोध करवाती है। ऐसे में किसी व्यक्ति के लिए उपयोगी होती है सामाजिक तथा धार्मिक सतर्कता। अभिव्यक्ति की आज़ादी तथा पीड़ाओं को आँकने की क्षमता। जिसके लिए ज्ञान एक अनिवार्य स्रोत है। ज्ञान विभिन्न पहलुओं में आज़माया जाता है। जिस व्यक्ति को जो ज्ञान होगा वह उसी विषय में अभिव्यक्त होता है। उदाहरण के तौर पर
धार्मिक ज्ञानी राजनैतिक कल्पना नहीं कर सकता । और न ही आर्थिक निपुण व्यक्ति सामाजिक चेतना से रू-ब-रू हो सकता है। इसीलिए जो व्यक्ति जिस भी क्षेत्र का होता है वह अपनी बात उसी सीमा के भीतर कर सकता है। अतः अभिव्यक्ति के विभिन्न आयाम हो सकते हैं। तथा विभिन्न

क्षेत्रों में अभिव्यक्ति संभव है। अभिव्यक्ति कई विधाओं में की जा सकती है। कविता, कहानी, लेख, उपन्यास, गीत, ग़ज़ल, संस्मरण, जीवनी इत्यादि। आज समाज सिमट रहा है। सामाजिक परिस्थितियाँ पहले की अपेक्षा अधिक प्रत्यक्ष है। आज हम सभ्यताओं का समन्वय देख सकते हैं। धार्मिक आस्था तथा आर्थिक दशा विभिन्न हैं तथा इनमें एक अस्पष्टता सी बनी हुई है। परन्तु सामाजिक, राजनैतिक तथा दार्शनिक दूरियाँ सिमटने लगी हैं। सभ्यताएँ, संस्कृतियाँ, रीति-रिवाज तथा अभिव्यक्तियाँ एक दूसरे में गुत्थम-गुत्था हो रही हैं। ऐसे में अगर हम कविता की बात करते हैं तो हम पाएँगे कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एवं उसका सामाजिक परिप्रेक्ष्य कैसा है ? कविता की परिभाषा क्या है ? कविता-कर्म क्या है ? कविता कब और क्यों हो ? ये सभी प्रश्न अत्यंत आवश्यक हैं। समय की नब्ज़ को टटोलते हुए उसे शब्दों में अंकित करने की विद्या को अभिव्यक्ति कहते हैं। कविता भी अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है। हमारे अन्तस की पीड़ाओं का मवाद है जो दर्द के मौसमों में हरा हो जाता है। कविता होठों पे टिकी बाँसुरी है जो सातों सुरों में आलापी जाती है और मस्तिष्क के पटल पर गहरी उतर जाती है। अतः कविता समय को सामाजिक तराजू पर तौलती है।

युहिले पत्रिका का नया रूप आपको कैसा लगा कृपया अपने पत्रों द्वारा हमें अवगत करवाएँ।

धन्यवाद।

सम्पादक

एक और कलिंग तक

– स्वामी अंतर नीरव

अभी–अभी तो कटी है
मेरी बेटी के धागे से
सयालकोटी मुंडे की पतंग।
स्वयं में उलझे पड़े
कँटीले तार
चिड़ियाँ, पर्र बदलने लगी हैं
घोंसले भी।
लुहारी गेट के पास
फिर बिकने लगे हैं
किशोर के हिट गीत।
सरहद पर अब
कहाँ लिखी जाती है
गोलियों से
दो बूँद जीवन की इबारत।

गौतम ठहरो,
......ठहरो !
अति विशिष्ट
अस्त्र के निर्माण तक
एक और कलिंग तक।
उसके पश्चात
मैं,
लहू सने हाथों लिख दूँगा
कि अब युद्ध नहीं होगा।

निहालपुर सिंबल
सिंबल कैम्प जम्मू

चुटकी भर भाग्य

– कुलविंदर सिंह मीत

आज कोई साधू
अपनी पोटली खोल
थमा गया
राख की एक पुड़िया
और दे गया आशीर्वाद
मेरे उज्जवल भाग्य का
जो अब तक
उसकी राख वाली पुड़िया में बन्द था
खरीद लिया मैंने
उसके पात्र में गिरते
सिक्के की खनक से
भला किया
अन्यथा
मेरा भाग्य
कोई और खरीद लेता
और बन जाता
मेरे हिस्से की धरती
और आकाश का स्वामी
अगर ऐसा होता
तो मैं भी खरीद लेता
एक और पुड़िया
किसी और के भाग्य की
और बन जाता
किसी और के भाग्य का स्वामी
जो कदाचित मेरा नहीं होता

मेरी कलम

– सतीश विमल

किसी ने
जब मुझ से कहा
मैं तुम्हारी क़लम पर
अदा होना चाहता हूँ
मेरे मन–मस्तिष्क की छातियों में
मनों दूध उतर आया
जो ख़रीदार चाहता है।

मोर और मदारी

है कहीं पर
वर्षा की उम्मीद जागी
मोर नाचे
और कहीं पर
चार सिक्कों के लिए
नाचे मदारी

मोरनी के संग लेटे
मोर सोचे
कल की बारिश
और सोये........
और मदारी
आसमाँ पर देख बादल
कल की रोटी सोचता है
नींद ग़ायब

पोस्ट बॉक्स : 1089
जी.पी.ओ श्रीनगर,
कश्मीर-190001

अन्तिम पड़ाव

– शकुन्त दीपमाला

अन्धेरा घना होने लगा था और मुझे जाना था सुदूर देश के एक गाँव। अन्जान मार्ग के सर्पीले मोड़ जब पगों को बरबस ही आगे और आगे खींच रहे हों तो आगे बढ़ने के सिवा और कोई विकल्प नहीं होता। समय की झीनी चादर आगे–आगे सरक रही थी और मैं लम्बे–लम्बे डग भरता हुआ यात्रा का फ़ासला कम करने का प्रयत्न कर रहा था। कोई साथी भी न था और मार्ग था मेरा अन्चीन्हा। यही सुना था रास्ता सीधा है और गाँव काँचनपुरी ही अपना ठिकाना है।

खुला सपाट मैदान था मेरे नीचे और ऊपर विस्तृत आकाश, जिस का एक छोर उस फैलते हुए गहन अन्धकार में रक्ताभ हो रहा था। धीरे–धीरे पूरा चाँद पहाड़ियों से ऊपर सरक आया, मुस्कुराता हुआ। मन खिल उठा जैसे सचमुच में मिल गया हो कोई अपना राहगीर साथी।

काँचनपुरी की कल्पनातीत भव्यता के विषय में सोचते हुए चुपचाप चला जा रहा था। चलते–चलते एक जगह रुक गया दूसरे रास्ते से एक और राही इसी तरफ आ रहा था। सोचा थोड़ी प्रतीक्षा कर ही लेनी चाहिये। एक से भले दो शायद एक ही मन्ज़िल का राही। मेरा अनुमान ठीक निकला। पास आ कर उसने भी सन्तोष की साँस ली और बोला -- "अच्छा हुआ हम दोनों मिल गये, मार्ग भी तो कम लम्बा नहीं।"

मेरा मन उमंग और उत्साह से भरा हुआ था। वह समय मेरी चाहतों और उमंगों का मधुमास था। मेरा साथी बड़ा सहृदय और गम्भीर था। मेरे लिये बेटा उच्चारण के

साथ ही उसका निर्मल वात्सल्य छलक पड़ता था। वह कोई गीतकार लगता था। सराबोर चाँदनी में उसकी कण्ठ–माधुरी मेरे कानों में मधु घोलने लगी। सब कुछ मेरे मन के अनुरूप था। उसके गीतों का रस अद्‌भुत था। व्यथा जैसे द्रवित हो कर मन मस्तिष्क तथा आँखों से बह निकली हो। मैं दुखी हो उठा। उस के दुःख को मैं अपनी मस्त उमंगों की छलछलाती धारा से नहला कर भार–विमुक्त कर देता ऐसा सामर्थ्य मुझ में न था।

हम चुपचाप चलते जा रहे थे। बीच–बीच में मैं मार्ग के प्रति जिज्ञासा–वश कई प्रश्न कर बैठता। उस का उत्तर संक्षिप्त और दार्शनिकता पूर्ण होता। और जब तक मैं उस का सही अर्थ बैठाने का प्रयत्न करता वह मेरे अपरिपक्व ज्ञान को चुनौती देता हुआ एक और गीत छेड़ देता।

अब मैदान धीरे–धीरे संकीर्ण हो रहा था। दोनों ओर की ऊँची सतह ऊँचे पर्वतों के एक दर्रे की बाहों में सिमट रही थी। उस संकीर्ण घाटी में अन्धकार काफी घना था। वह राही अब तक तो मेरे कदम से कदम मिला कर आराम से चल रहा था। आगे मार्ग की जटिलता को भाँप कर कुछ घबरा सा गया परन्तु बोला कुछ नहीं और रुका भी नहीं। भीतर तेज़ गति जादुई प्रभाव वाली वायु चल रही थी। वायु के वेग से मैं स्वयं भी खीझ उठा था क्योंकि आगे चलने में काफी जोर लगाना पड़ता था। वह मुझे ढाढस बँधाते हुए बोला -- "घबराते क्यों हो ? इस मार्ग में रुको मत। समय आगे निकल जायेगा और हम बीच में ही रह जायेंगे।"

मेरा हाथ पकड़ कर वह मुझे लिवा ले चला। मुझे लग रहा था इस वायु का विचित्र प्रभाव मेरी धमनियों के रक्त प्रवाह को धीरे–धीरे शिथिल कर रहा है। राही के हाथ की पकड़ भी निर्बल सी हो रही थी। अब संकीर्ण मार्ग समाप्त हो गया था। हम लोग पुनः खुले धवल मार्ग पर

चलने लगे। अब मैं भी अपने साथी की तरह गम्भीर हो गया था। मेरी आशा उत्साह और उमंगों के खिलौने शायद उस जादुई वायु ने हथिया लिये थे। अब मुझे अपने भीतर कुछ चुभता सा जान पड़ा। इस दर्द का आभास मुझे प्रथम बार हुआ था शायद ऐसा ही दर्द उस राही के भीतर भी होगा तभी उस के गीतों में भी इसी टीस का आभास होता था। मेरा मन था कि अब मैं भी कुछ ऐसा गुनगुनाऊँ जो मेरे भीतर का बोझ कम कर दे।

मैं बोला -- "कैसा विचित्र मार्ग था, शुक्र है समाप्त हुआ।" वह बड़े ही रहस्यमय ढँग से मुस्कुराया। अभी तो तुम्हें ऐसे तीन पड़ाव और लाँघने पड़ेंगे। उसके सफ़ेद बाल अब स्पष्ट दिख रहे थे ज़ाने मैंने पहले क्यों नहीं देखे। मेरी घबराहट मेरे मुँह में आ गयी --"तो चलो वापिस चलें -- मैं बोला।" वह अविचल था। शान्त, बिल्कुल शान्त। बोला -- "वापिस ? असम्भव। कैसे नादान हो। यह कालगति वायु है। इस की विपरीत दिशा में कोई जा भी कैसे सकता है ?

उफ आगे अब दूसरा पड़ाव था। बिल्कुल वैसा ही संकीर्ण, अँधेरा। मैंने कस कर साथी का हाथ पकड़ लिया। उसके मुँह से हल्की सी अस्फुट ध्वनि निकल रही थी। वास्तव में इस वायु के प्रभाव को सहना आसान न था।

जब हम पुनः बाहर आये मेरे अंगों में भरपूर शिथिलता आ गयी थी और मेरा साथी कमर झुका कर बड़ी कठिनता से चल पा रहा था। मैंने ढूँढ कर उसे एक लाठी पकड़ा दी और हम पुनः चल पड़े।

राही बोल रहा था -- "हमें ही हालत में आगे बढ़ना है। गतिहीत क्षणों के लिये हमें पछताना पड़ेगा। मंज़िल आयेगी और हम इकट्ठे मिल बैठेंगे।" अब मैं आशा को अपने मन के भीतरी कोष की तहों से कुरेद-कुरेद कर निकाल रहा था परन्तु कुछ भी हाथ न लगा। मन मार कर हम चले जा रहे थे। अब सामने था एक और पहाड़ का

संकीर्ण मार्ग और उसमें बहने वाली निरन्तर गतिशील वायु। वह राही मेरे पीछे धीरे-धीरे चल रहा था।

सहसा मुझे उसके गिरने की आवाज आयी। मैंने पीछे मुड़ कर देखा। उसके हाथ से लाठी गिर गयी थी और वह एक ओर लुढ़का पड़ा था। मैं उसे सहारा देने को झुका। वह पुनः उठने की स्थिति में न था और उस की वाणी वायु के अधरों पर तैरने लगी -- "काँचनपुरी आ गयी -- लो काँचनपुरी आ गयी, तुम भी चलते रहना......चलते रहना।"

और इसके साथ ही उसके निर्बल शरीर को उस तेज़ हवा का एक झोंका पतझड़ के एक सूखे पत्ते की तरह उड़ा कर न जाने कहाँ गायब कर गया। मेरे हाथ में सिवाय एक लाठी और कपड़े में लपेटी हुई उस की एक मात्र धरोहर के कुछ न लगा। मेरा उस को बार-बार पुकारना व्यर्थ था। उसकी लाठी का सहारा ले कर मैं टूटे मन से बाहर आ गया। मुझे उसके साथ का अभाव अखर रहा था। दुखी मन से मैंने उस की छोटी सी गठरी खोल दी। उस में सिवाय रोटियों के कुछ न था। केवल रोटियाँ रास्ते का मात्र सामान।

अब मेरा शरीर थकान और भूख से मृतप्रायः हो रहा था। अब मेरी स्थिति बिल्कुल उसी राही जैसी थी जब हम पिछले संकीर्ण मार्ग से निकले थे जो राही का अन्तिम पड़ाव था।

मैं थकान और भूख से निढाल हो रहा था। मैं रोटियाँ खोल कर बैठ गया। उसकी भी, अपनी भी और सोचने लगा राही की बात।

आज मैं अकेला हूँ मेरी दीर्घ यात्रा का अन्तिक पड़ाव अभी शेष है। मुझे जाना है क्योंकि मुझे काँचनपुरी पहुँचना है।

अनाभिका

- नवजीत कौर

ऐ ममता की कली,
मुझे त्याग क्यों चली।
मैं बालिका तेरी कोख,
दे रहने, इस गली।।

तेरा थाम हाथ चलूँ,
तेरे ही कर से खाऊँ।
तेरे अंक विराजूँ,
लोरी सुन सो जाऊँ।
तन मन सुन्दर स्वपन हो,
तेरी नींद में आऊँ।।

खिलने को हूँ मैं,
नई जीवट कली।
चढ़ा न पुष्प की आशा में,
फूल की बलि।।
आने दे उस जहाँ में,
जहाँ तू बढ़ी-पली,
माँ-साँचे में ढली।।

ऐ ममता की कली।
ऐ ममता की कली।।

50 सेक्टर-11
नानक नगर, जम्मू।

सरिता

– वरुण शर्मा

श्वेत नभ के संग ज्यों श्यामल ध्वजा हो,
या किसी तरुणी ने नीला पट धरा हो।
ठीक वैसे ही हरी वसुधा से सटकर,
बह रही स्वछंद इक कल्लोलनी सुंदर।।

दाहिने तट पर खड़े मनहर तमाल,
वाम तट पर अश्वत्थ है सबसे विशाल।
बीच में दोनों किनारों के सिमटकर,
बह रही स्वछंद इक कल्लोलनी सुंदर।।

इधर भानु स्वयं विसर्जित हो रहे,
उधर तारक व्यर्थ गर्वित हो रहे।
चंद्र का प्रतिबिम्ब लेकर वक्ष पर,
बह रही स्वछंद इक कल्लोलनी सुंदर।।

एफ -522
राजपुरा जम्मू।

"ख़राबी"

– परमप्रीत कौर रिंपी

राजू सुबह से लेकर शाम तक परिश्रम करता था तो कहीं जा कर रोज़ी-रोटी के लिए रुपए कमा पाता था।

आज वह सुबह से खड़ा था लेकिन कोई आया ही नहीं था।

दोपहर के बाद एक आदमी उस की दुकान पर रुका। आते ही उस ने पूछना शुरू कर दिया।

"भिंडी का क्या दाम ?"

"40 रु० किलो।"

"और गोभी ?"

"35 रु० किलो।"

"यह मटर ?"

"30 रु० किलो।"

अंत में उस को मटर पसंद आ गए। तभी उस ने अपनी जेब की तरफ़ नज़र घुमाई। जेब में पाँच रुपए थे।

"यार ! सब्ज़ी तो हम को लेनी ही थी। लेकिन सब्ज़ी ख़राब है और इस के दाम भी बहुत ज़्यादा हैं।" कह कर वह आगे की तरफ़ बढ़ गया।

राजू सोच रहा था कि सच में ही उस की सब्ज़ी में नुक़्स था या फिर............?

"सफ़ेद साड़ी"

– प्रभप्रीत कौर रिंपी

गीता छत्त पे खड़ी सुबह के सूर्य की बिखरी लाली को देख रही थी। सूर्य की किरणों के कारण रुई की भाँति सफ़ेद बादल भी संतरी दिखाई दे रहे थे। पंछी अपने घोंसलों से निकल कर चोगे की तलाश में निकल पड़े थे। धीरे-धीरे ठण्डी वायु चल रही थी। जिस के साथ परदे हिलजुल रहे थे।

वायु का एक तेज़ झोंका आया और साड़ी को उड़ा के दूर निकल गया। गीता ने अपना पल्लू संभाला, तभी उस की निगाह साड़ी के सफ़ेद रंग पर पड़ गई। विधवा गीता अब कुदरत का सारा नज़ारा भूल चुकी थी। उस को वह मनहूस शाम याद आ रही थी जब उसे वह पहननी पड़ी थी।

B-XI/3452
नज़दीक बरोटा, खुड्डी
रोड़, बरनाला,
ज़ि०-संगरूर (पंजाब)

ख़िज़ाँ से पहले की सब रुतों का............

– डॉ० दरख़्शाँ अंदराबी

ख़िज़ाँ से पहले की सब रुतों का
खुमार अब तक उतर चुका है
वो शोख़ रँगीन इक परिंदा
जो चहचहाता था मर चुका है
वो उजला-उजला धुला सवेरा
वो रेशमी-सी गुलाबी शामें
वो चाँदनी में नहाए पौदे
वो साहिलों पर बने घरौंदे
वो सुरमई सी महकती रातें
वो पहरों बातें
वो अपनी गुड़िया को चाँद तारों से जगमगाना
दुल्हन बनाना
वो बात बेबात मुस्कराना
वो आँखों-आँखों में खिलखिलाना
किसी का आना
नये परिंदों की बोलियों से
शजर के पत्तों का काँप जाना
ज़रा-सी आहट
वो उँगलियों के चमकते पोरों से फूटती इक झंझनाहट
वो सारे लम्हे
वो अनछुए से लतीफ़ जज़्बे
वो अब कहाँ हैं
ख़िज़ाँ से पहले की सब रुतों का
खुमार अब तक उतर चुका है

और अब यह उजड़ी उदास शामें
स्याह रातें
ख़मोश हैं लब
कहाँ हैं बातें
घरौंदे साहिल पे उठती लहरों में खो गए हैं
खिलौने ख़ामोश हो गए हैं
किसी ने गुड़िया तोड़ डाली
हँसी चुरा ली
परिंदे आँगन से उ़ड चुके हैं
नए ठिकानों से जुड़ चुके हैं
यह चाँदनी जैसे कोई मुफ़लिस
सिसक-सिसक कर किसी सड़क पर
दवा से महरूम हो रही है
यह कैसा मौसम गुज़र रहा है
शजर के साये डरा रहे हैं
सहर भी शबनम के आँसुओं से
गुलाब की एक-एक पत्ती को धो चुकी है
न लम्स में अब है कोई लज़्ज़त
कि जुस्तजू ख़त्म हो चुकी है

दो उर्दू ग़ज़लें

\- *लियाकत जाफरी*

शर्बतों से पेड़ गीले हो गए।
फल बहुत ज़्यादा रसीले हो गए।।
मौसमों के सर पे सेहरा सज गया।
पर्बतों के हाथ पीले हो गए।।
नौजवानी पर बुढ़ापा छा गया।
बचपने कितने नशीले हो गए।।
साँप ज़ख़्मी हो के ग़ायब हो गया।
पत्थरों के होंट नीले हो गए।।
शहर के हर घर में दीवारें उठीं।
गाँव में दो सौ क़बीले हो गए।।
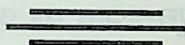
मेरी सोचो, मेरे ख़्वाबो-ख़्यालो।
जो खुद संभलो तो फिर मुझको संभालो।।
फलों के जिस्म शर्बत हो गए हैं।
दरख़्तों की तरफ़ पत्थर उछालो।।
मुझे मुद्दत हुई मैं मर चुका हूँ।
मेरी कश्ती समन्दर से निकालो।।
हवायें मुझको उरियाँ कर रही हैं।
मेरी तुर्बत पे कोई ख़ाक डालो।।
मैं तेरे शहर को कब जानता था।
पराया हूँ मुझे अपना बना लो।।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की राष्ट्रीय चेतना

– कपिल अनिरुद्ध

राष्ट्रीय चेतना की भावना राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त को भारतेन्दु युग से मिली। भारतेन्दु युग में अँग्रेज़ों का चरित्र अभी खुल कर सामने न आया था जबकि गुप्त जी के समय में अँग्रेज़ी सरकार की दुर्भावना छुपी न थी और उन के लिए राज-भक्ति का भारतेन्दु युग का द्वन्द्व भी नहीं था। अँग्रज़ों का सामना करने के लिए गुप्त जी के समय में राजनीतिक स्तर पर काँग्रेस की स्थापना हो चुकी थी। इसीलिए उन की कविताओं में राष्ट्रीय नवजागरण के स्वर ज़्यादा उग्र एवं आक्रामक रूप में दिखाई पड़ते हैं। उन्होंने भारत की भविष्य कल्पना का आधार रामायण, महाभारत तथा पुराणों को बनाया। अतः उन के काव्य में कहीं-कहीं गौरवशाली भविष्य के पुनरुत्थान का आभास भी मिलता है। वर्तमान की अनेक समस्याओं का समाधान अतीत की घटनाओं के आधार पर करने के बावजूद गुप्त जी अतीतोन्मुखी नहीं हुए हैं। राष्ट्रीय स्वतंत्रता आन्दोलन में उन की देशभक्ति एवं राष्ट्रीय चेतना का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। अँग्रेज़ी शासन के अत्याचारों से लेकर सत्याग्रह, सविनय अवज्ञा आन्दोलन, कृषक-मज़दूर आन्दोलन, स्वाधीनता प्राप्ति का हर्षोल्लास, देश के विभाजन का आतंक, संसदीय कार्य-विधि तथा राष्ट्रभाषा का प्रश्न बन के काव्य का प्रमुख विषय बना। अपनी महत्त्वपूर्ण रचना 'भारत-भारती' गुप्त जी भारती जनमानस को झिंझोड़ते हुए अपने गौरवशाली अतीत से प्रेरणा लेकर वर्तमान की बिगड़ती दशा को सुधारने की

प्रेरणा देते हैं। वे बार-बार लोगों को यह एहसास दिलाते हैं कि हमारा वैभवशाली अतीत ही हमारे पुनरुत्थान में प्रेरक हो सकता है। गुप्त जी का मानना है कि हमारा पतन ही यह दर्शाता है कि कभी हम उन्नति के चर्म शिखर पर थे अतः हमें हतोत्साहित न होकर पुनः अपने उत्थान के लिए संघर्ष करना चाहिए। वे लिखते हैं :-

"उन्नति तथा अवनति प्रकृति का नियम अखण्ड है,
चढ़ता प्रथम जो व्योम में गिरता वही मार्तण्ड है।
अतएव अवनति ही हमारी कह रही उन्नति कला,
उत्थान ही जिसका नहीं उस का पतन हो क्या भला।।"

राष्ट्रकवि राष्ट्र के सभी वर्गों में जागृति का शँखनाद करते हुए उन्हें अपने कर्त्तव्य पालन में दृढ़ता से अग्रसर होने को कहते हैं। वे देश के रक्षकों, व्यापारियों तथा साधु-समाज को अपने कर्त्तव्य कर्मों द्वारा राष्ट्र हित में संघर्ष रत होने हो कहते हैं।

वे क्षत्रियों को उनके समृद्ध अतीत का स्मरण करवा गाँधी जी से बहुत प्रभावित हुए। राष्ट्रीय चेतना, सविनय अवज्ञा आन्दोलन की भावना, गाँधी जी के नैतिक एवं राजनीतिक विचार, सत्य और अहिंसा इत्यादि।

गाँधी वाद के सभी आदर्श उन्होंने अपनाये। व्यापारी वर्ग को सचेत करते हुए वे गाँधी जी के स्वदेशी आन्दोलन से प्रभावित दिखते हैं। व्यापारी वर्ग को चेतावनी देते हुए राष्ट्रकवि कहते हैं यदि अब भी वे सचेत नहीं हुए, यदि अब भी देश का कच्चा माल एवं धन विदेश जाता रहा तो हम भारतीय अन्न के एक-एक दाने के लिए भी तड़प जायेंगे।

“वैश्यो ! सुनो व्यापार सारा मिट चुका है देश का,
सब धन विदेशी हर रहे हैं, पर है क्या क्लेश का।
अब भी न यदि कर्त्तव्य का पालन करोगे तुम यहाँ,
तो पास है वे दिन कि जब भूखों मरोगे तुम यहाँ।।”

साधु–समाज में आई विकृतियों के भी गुप्त जी दुखी थे। आज साधु–समाज का पतन हो चुका है। गेरुये वस्त्रों की ओट में साधु कहे जाने वाले लोग, लोगों की श्रद्धा से खिलवाड़ करने लगे हैं। गुप्त जी साधु–समाज को आडम्बरों से निकल, स्वयं का कल्याण कर, विश्व कल्याण के पथ पर अग्रसर होने की प्रेरणा देते हुए लिखते हैं :–

“हे साधुओ ! सोये बहुत अब ईश्वराधन करो,
उपदेश द्वारा देश का कल्याण कुछ साधन करो।
डूबे रहोगे और कब तक हाय ! तुम अज्ञान में ?
चाहो तुम्हीं तो देश की काया पलट दो आन में।।”

स्वतंत्रता संग्राम में गुप्त जी की भारत–भारती इतनी लोकप्रिय हुई कि आन्दोलन कर्ता तक इस की पंक्तियाँ गुनगुनाते हुए आगे बढ़ते थे। देश की वर्तमान स्थिति का बेबाक वर्णन उन्होंने भारत–भारती के वर्तमान खण्ड में किया। गरीबी और अमन, व्यापार, शिक्षा आदि समाज का कोई भी चित्र उन से छिपा नहीं रहा।

देश के सभी वर्गों, सम्प्रदायों को एकता के सूत्र में पिरोते हुए गुप्त जी सबको देश की शान्ति एवं खुशहाली में अपना योगदान देने को कहते हैं :–

“आओ, मिलें सब देश–बान्धव हार बन कर देश के,
साधक बनें सब प्रेम से सुख शान्तिमय उद्देश्य के
क्या साम्प्रदायिक भेद से है ऐक्य मिट सकता अहो,
बनती नहीं क्या एक माला विविध सुमनों की कहो ?”

मैथिलीशरण गुप्त ने अपनी कविताओं के माध्यम से भारतीय नवजागरण और राष्ट्रीयता की भावना के प्रचार-प्रसार में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। राष्ट्रीय नवजागरण को व्यापक रूप से साहित्य की अन्तर्वस्तु बनाकर द्विवेदी युग में गुप्त जी ने देश की जनता के साथ साहित्य का व्यापक सम्बन्ध स्थापित किया। वे अपनी काव्य यात्रा में राष्ट्रीय आन्दोलन की तत्कालीन आवश्यकताओं के अनुसार स्वयं को तथा अपनी सृजनशीलता को ढालते रहे हैं।

अस्तित्व का भ्रम

– प्रेम सुभाष 'प्रेम'

तंग सी गली अन्जान। उस गली का नम्बर और जान वाले रास्ते को देखा ते कई बार...... परन्तु अन्तस कभी भी भीतर न झाँका, गली जिस का रूप आकार उस जैसा है इसलिए उसे गली कहा जा सकता है वरना उसे रास्ता, एक रेखा, एक नाला, एक धारा या सितारों से बंधी कतार, उस के भीतर एक मकान जिस का कुछ भी मकान जैसा नहीं परन्तु कुछ-कुछ बनावट ऐसी है कि उसे मकान कहा जा सकता है। उसी मकान के भीतर एक कमरा, जिसकी छत, दीवारें, फर्श कुछ भी नहीं फिर भी उस में रहा जा सकता है और सुविधा भी प्राप्त की जा सकती है एक कमरे जैसी इसलिए उसे कमरा कहा है। वास्तव में अगर अन्तस की आँख से परखा जाए तो कुछ भी नहीं एक तुलना मात्र है। आप का जी चाहे तो उसे कब्रिस्तान, पहाड़ी की चोटी, पहाड़ों के बीच की घाटी, श्मशान घाट, महल, कुछ भी कह सकते हैं और वहाँ भी टिमटिमाता हुआ एक दीया जिसे बुझने का डर नहीं हवा का, बारिश का या किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा बुझा पाने का और न ही उस की अग्नि द्वारा पास पड़ी सूखी घास के जलने का या गीली हरी घास के सूखने या मुरझाने का। किन्तु इतना अवश्य है कि उस के जलने द्वारा जो प्रकाश प्रकट हो रहा है उस से कई राह चलने वाले राह का पता लगा लेते हैं या उन्हें रास्ता दिख जाता है। कुछ ठण्डक में गर्मी के लिए उस के पास बैठ उसे ताप कर चैन पाते हैं या कुछ पढ़ने-लिखने के जिज्ञासु उस के प्रकाश में अपना कार्य कर लेते हैं कुछ ऐसे हैं जिन्हें केवल उसी प्रकाश में दिखता है तो वह वहीं

बैठे रहते हैं और कुछ जिन्हें यह दीया दिखाई ही नहीं देता।

वह दीया निरंतर जलता रहता है परन्तु उस की एक खास बात यह है कि उस के पास कोई परवाना नहीं आता। एक दिन दो परवाने आपस में कानाफूसी करते-करते वहाँ आ पहुँचे पहले वह दूर-दूर से उसे घूर-घूर कर देखते रहे, खुद ही आपस में अपने अतीत को दोहरा उस में बिताये हुये वेदना या सुख के क्षणों का व्याख्यान करते रहते, कभी हँसते कभी रोते, दीया प्रतिदिन उन्हें पढ़ता और उन की बातें सुनता। दीया तो कभी कुछ कहता ही नहीं परन्तु परवानों को ऐसा लगता वह भी प्रतिदिन उन्हें अपनी कहानी सुनाता है। अब परवाने प्रतिदिन आते और अपनी बातें न कर केवल दीये की ही बातें सुनते रहते और हैरान होते, यहाँ हवा भी है बारिश भी होती है, कई बार तूफ़ान भी आ जाते हैं परन्तु यह बुझता क्यों नहीं। वापिस लौटते समय वह उस दीये के बारे में विचार विर्मश करते परन्तु निर्णय नहीं कर पाते। बस केवल खुद में ही उलझ जाते।

जो बातें वह रास्ते में दीये के बारे में करते दूसरे दिन आते ही आते ही वह दीया उन्हें सुना देता। अब इन बातों से उन्हें यह विश्वास हो गया कि हो न हो यह दीया हमारे बारे में सब कुछ जानता है और वह नियमबद्ध हो गये क्योंकि अब उन्हें दीये की बातों में रस आने लगा था। दीया उन्हें प्रतिदिन बेहद सुन्दर और अलौकिक कहानियाँ सुनाता। वह उस के रस में डूबे रहते और कभी-कभी मौका पा कर अपनी बकवास सुना उसे बोर कर लौट आते। एक दिन एक परवाना बीमार हो गया। अब दीया और दूसरा परवाना दोनों परेशान हो गये। वह परवाना मानसिक बीमार था और दीये की अग्नि में जल कर भस्म हो जाना चाहता था। दीये ने परवाने की नब्ज देखी और उस की चिकित्सा करने लगा। दीया बेचारा बेहद संवेदनशील है और किसी को

भी रोगी या दुखी नहीं देख सकता। वह प्रतिदिन उसे नई-नई दवाईयों से उस की चिकित्सा करना अपना भाग्य समझता था। अब परवाने कभी-कभी दीये से कहते तू हमें सत्य के बारे में प्रतिदिन इतने किस्से सुनाते हो कोई तो अपना भी किस्सा सुनाओ वह कुछ नहीं कहता। सत्य की कहानियाँ सुनते-सुनते अब परवाने उसे ही सत्य मान चुके थे। सत्य ही सभी कुछ है सत्य को जीतने, सत्य को जानने और सत्य बनने की कोशिश करो क्योंकि यह संसार की अहम आवश्यकता है। ज्यों-ज्यों दीया परवाने की चिकित्सा करता उस की स्थिति बिगड़ती ही जाती।

अचानक एक दिन परवाना बोला मैं आज सत्य को जान गया हूँ और अब यहाँ से लौट कर वापिस नहीं जाऊँगा और दीये ने भी उसे प्रमाण पत्र दे दीया कि वह जहाँ भी जायेगा उसे अपने साथ ले जायेगा और अगर यहीं रहा तो उसे अपने करीब रख लेगा और इस तरह परवाने ने उस के साथ ही आसन जमा लिया और उस की लौ में मिल गया। परन्तु दूसरा मूर्ख था वह पूछ बैठा सत्य क्या होता है और उस में किस तरह विलीन हुआ जाता है। दीये ने उत्तर दीया सत्य में केवल सत्य ही विलीन हो सकता है झूठ नहीं। तुम तो झूठ हो, झूठ को अपनी वास्तविकता का पता चल गया और वह अपना सा मुँह लिये लौट आया। दीये ने तो दोनों जिज्ञासुओं को एक जैसा ही दान दीया परन्तु प्राप्त करने वाले भिन्न निकले। एक सत्य को जीत गया। एक झूठ को। सभी कुछ झूठ ही तो है वह खुद भी झूठ। फिर दोनों का मिलन कैसा। जैसे रोशनी अंधेरे में, दिन रात में सुख दुःख में नहीं समा सकता। सत्य केवल सत्य में, झूठ में नहीं समा सकता।

झूठा परवाना प्रतिदिन दोनों सत्य श्री प्रतिमाओं के दर्शन करने का क्रम नहीं तोड़ना चाहता। हमेशा प्रतीक्षा में

रहता है कब यह सत्य उस की गली से गुजरेगा और वह उस के साथ हो लेगा या रोता बिलखता, तड़पता, चीखता-चिल्लाता रहेगा। मुझे भी साथ ले लो। क्योंकि वह मूर्ख है, अज्ञानी है। केवल प्रतीक्षा कर सकता है, लक्ष्य को नहीं पा सकता। तड़प सकता है शान्ति उस के जीवन का लक्ष्य नहीं। वह केवल अपनी क्षमता का विशलेषण कर सकता है कि वह कितना तड़प सकता है। केवल दीये के पास बैठ उस की गर्मी से झुलसता रहेगा। उस के साथ जल मरना उस का भाग्य नहीं। कुछ सोच दूसरा परवाना अपने अतीत के साथ जा बैठा। आज तक जीवन में उसे चोर, चरित्रहीन, मूर्ख, अज्ञानी, अनपढ़ इन सब उपाधियों से तो अलंकृत किया गया था तो वह कुछ घबराया था परन्तु आज की झूठ की माला से उसे दुःख नहीं पहुँचा। वह झूठा ही तो है। सत्य और झूठ कभी भी नहीं मिल सकते। यह तो एक नदी के दो किनारे हैं परन्तु सत्य की लौ में बैठ उसे निहारने, उस का गुणगान करने, उस के सद्गुणों का व्याख्यान करने में ही अपनी तृप्ति समझे है। झूठ का तो कोई अस्तित्व ही नहीं होता। वह अपने आप को असमर्थ तथा धूल के कण बराबर समझ तृप्त हो गया। उसे उस का अस्तित्व मिल गया और बेहद प्रसन्न मुद्रा में खुद को मिटा हर एक के रूप में मिश्रित हो गया। क्योंकि स्वयं को मिटा कर ही दूसरों में समाया जा सकता है।

चपरासी

– डॉ० संदीप कुमार मिश्र

लेखनी नहीं थक सकती है,
लिख करके तेरी यादों को
सब द्वार तेरे दस्तक देते
अर्जी देते चपरासी को
कुछ लोग पूछते हैं उससे
कब आयेंगे साहब ऑफिस को
चपरासी बोला यदि, काम कराना है उनसे
अर्जी में कुछ मुद्रा रख, पकड़ा दो मुझको चुपके से
यदि इतनी श्रद्धा रखते हो,
तो काम करा दूँ झटके से
साहब का मिलना मुश्किल है
लिखकर दे दो फरियादों को
लेखनी नहीं थक सकती........

जो आता है अर्जी देता है
चपरासी उनको रख लेता है,
जिनमें कुछ मुद्रा रखी है,
उन पर हस्ताक्षर करवाता है,
शेष बची सारी अर्जी को
कूड़े की भेंट चढ़ाता है,
बिन पैसे अर्जी देने वालो
मत कोसो अपने भाग्यों को
लेखनी नहीं थक सकती हैं
लिखकर के तेरी यादों को

136-कृष्ण नगर हाईकोर्ट रोड
चुंगी चौकी सीतापुर (उ०प्र०)
दूरभाष : 05862-312249

माँ

– डॉ० गिरीश काशिद

माँ खेत में करती है कड़ी मेहनत
गोद का शिशु रखती है पेड़ से बाँधे झूले में
खेत का अनाज डोल रहा है
छोटा शिशु बोल रहा है तुतली बोली
खेत की फसल जवानी पर है
छोटा शिशु हुआ है कॉलेज में दाखिल
पक गई है खेत की फसल
लड़के को आता है नौकरी का बुलावा
खेत का अनाज जाता है बाज़ार
नौकरी करने वाला लड़का भी शहर
खेत का अनाज बेचकर माँ सहती है फाके
लेकिन भेजती है बेटे को नौकरी पर
माँ के घर खत्म हुआ है अनाज
बेटे को मिल रहा है अच्छा वेतन
मशगूल है पत्नी के साथ शहर में
माँ बन जाती है अतीत की घटना
माँ खेत में करती है कड़ी मेहनत
बंजर धरती हँस रही है उस पर

हिंदी विभाग,
शिवाजी विश्वविद्यालय,
कोल्हापुर-416004

मोड़

– डॉ० गिरीश काशिद

जीवन की कँटीली राह
हर स्थान पर एक मोड़
चलते हुए सोचा था
अब यह आखरी मोड़
अब होगा नया जोड़
लेकिन यह तो भुलावा था
मोड़ के बाद भी था मोड़
चढ़ान और ढलान
खाइयाँ और पहाड़
जीत कम हार ज़्यादा
सुख में मेला
दुःख में अकेला
न राह कटी
न चाह टूटी

हिन्दी विभाग
शिवाजी विश्वविद्यालय
कोल्हापुर (महा०)

लेखकों से निवेदन

युहिले पत्रिका (त्रैमासिक) हेतु आपकी मौलिक/अप्रकाशित रचनाओं का स्वागत है।

– सम्पादक

वर्तमान परिवेश में हिन्दी का स्थान – एक आकलन

– डॉ० संदीप कुमार मिश्र

हिन्दी को देवभाषा संस्कृत की विरासत प्राप्त है। जो अत्यन्त समृद्ध भाषा है जिसमें विशाल शब्द–भण्डार है। इतना ही नहीं देवनागरी लिपि अत्यन्त सरल व वैज्ञानिक है तथा संसार की सभी भाषाओं को उसमें लिखा जा सकता है। यदि हिन्दी को समृद्ध किया जायेगा तो निश्चित रूप से क्षेत्रीय भाषाओं की समृद्धि होगी व देश की एकता को बल मिलेगा। यदि इतिहास के पन्नों को पलटा जाये तो ज्ञात होगा, कि हिन्दी भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के आधार पर विकसित भाषा है। इसमें भारतीयता भरी हुई है। हिन्दी सन्तों एवं सूफ़ियों की भाषा है व इसका विकास शान्तिकामी वातावरण में हुआ है। यह कभी आक्रामक नहीं रही, समय–समय पर इसका शोषण भी हुआ, किन्तु उसमें भी इसकी तरक्की होती रही और इसकी गरिमा बनी रही। हर देश की कुछ परम्परा व भावभूमि होती है। वही भाषा उसे पूरी तौर से स्पष्ट कर पाती हैं जो परम्पराओं में रमी होती हैं राम, कृष्ण, बुद्ध, गाँधी व नेहरू के विचारों को जितनी क्षमता के साथ हिन्दी स्पष्ट करती है, दुनिया की कोई भाषा नहीं कर सकती। इस स्थिति में यदि हमें देश के मूल विचारों एवं आदर्शों का कायम रखना है, तो हिन्दी को यथोचित स्थान देना ही पड़ेगा।

भाषा केवल भाषा नहीं होती, उसके माध्यम से एक विशाल जन समुदाय के विचार एक दूसरे तक पहुँचते हैं। निश्चित रूप से यह माध्यम वह होना चाहिए, जो एक विशाल जन समुदाय के सर्वाधिक लोगों को मान्य हो। हिन्दी

एक ऐसी भाषा है, जो इस देश में सर्वाधिक प्रचलित है। देश के अधिकाँश लोग इसे बोलते हैं, अहिन्दी भाषी प्रदेश जिनके सम्बन्ध में यह कहा जाता है, कि उन लोगों को हिन्दी में कठिनाई होती है। ऐसा पाया गया है कि हिन्दी के प्रति उनमें रुचि विशेष है व हिन्दी - भाषी प्रदेश के लोगों की अपेक्षा कहीं अधिक शुद्ध हिन्दी लिख-पढ़ लेते हैं।

इन सभी तथ्यों को देखते हुए यह बात आने आप स्पष्ट हो जाती है, कि हिन्दी एक ऐसी भाषा है, जिसे भारत वर्ष में राजभाषा और राष्ट्रभाषा के रूप में अपनाया जा सकता है, और दूसरी किसी भी भाषा में वह क्षमता नहीं है। अतः देश की एकता और अखण्डता को दृष्टि में रखते हुए हिन्दी को ही राजभाषा और राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करना चाहिये।

क्या खोया :-

यह विडम्बना ही है कि जिस हिन्दी भाषा ने देश के स्वतन्त्रता आन्दोलन को स्वर दिया। जन-जन को आज़ादी की लड़ाई में भाग लेने की प्रेरणा दी, जो देश के बड़े तबके की मातृभाषा है, वह अपने ही देश में सरकारी काम-काज की भाषा नहीं बन पाई। रह गयी मात्र औपचारिकताओं का मुखौटा। प्रायः यह देखने में आया है, कि १३ और १४ सितम्बर को हिन्दी दिवस तो बड़े उल्लास के साथ मनाया जाता है, और बड़े उत्साह वर्धक भाषण विद्वानों द्वारा दिये जाते हैं लेकिन इस को प्रयोग में नहीं लाया जाता है।

आज हम अपने हिन्दी भाषी देश पर ही नज़र डालते हैं तो देखने में आता है, कि तमाम स्कूल जो अँग्रेज़ी माध्यम से खुल रहे हैं। उनमें हिन्दी को बड़ी हेय दृष्टि से देखा जाता है। इन स्कूलों में अभ्यार्थी तो कान्वेन्ट एजूकेटिड होना चाहिये। यह सब बातें हमें अपनी मातृभाषा हिन्दी के बारे में

सोचने पर मजबूर करती हैं भाषा मनुष्य को केवल दूसरे तक पहुँचाने के लिये ही है, सोचने के लिये है। सोचने की शिक्षा देने वाली भाषा की नींव कच्ची हो रही है। घर में इस कमी की पूर्ति हो रही है, अब लोग बच्चों से खुद अँग्रेज़ी न जानते हुए भी, मेहमानों के सामने डाँट-डपट कर अँग्रेज़ी बुलवाते हैं और उनके सामने स्वयं को गर्वान्वित महसूस करते हैं। निमंत्रण-पत्र घर के संस्कार के प्रमाण होते हैं, वे अब अँग्रेज़ी में छपने लगे हैं। शुभकामनाओं तक के लिये हिन्दी अयोग्य हो गयी है। हिन्दी वालों का परम विश्वास है कि उनका काम अँग्रेज़ी के बिना नहीं चल सकता। यह हो रहा है हिन्दी के घर के भीतर।

यह कम गर्व की बात तो नहीं है कि आज दुनिया के १०० से भी ज़्यादा विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ी तथा पढ़ाई जाती है। उन देशों में हिन्दी-शिक्षण का कार्य इसीलिए प्रारम्भ किया गया, क्योंकि उन्हें लगा कि भारत से सम्पर्क बनाने के लिए इस भाषा को सीखना बहुत जरूरी है। लेकिन वहाँ भी भी अब स्थिति खराब हो चुकी है, क्योंकि रिटायर हुए हिन्दी अध्यापकों के पदों पर नियुक्तियाँ नहीं हो पा रही हैं, सरकारी सहायता बन्द की जा रही है। पद भी खत्म किये जा रहे हैं, यह सब हिन्दी के लिये अच्छे संकेत नहीं हैं।

जहाँ तक अपने देश में राजभाषा के रूप में हिन्दी की बात है तो सच यह है कि हिन्दी से हम तथा हमसे हिन्दी गहरे तौर पर जुड़ी है लेकिन इधर एक बात जरूर कुछ सोचने पर मजबूर करती है, वह यह कि हिन्दी प्रदेश का बच्चा आज हिन्दी नहीं लिख पा रहा है। यह हो रहा है हिन्दी के घर के भीतर।

क्या पाया :-

विगत वर्षों में हिन्दी के सन्दर्भ में ऐसा देखने में

आया है कि हिन्दी भाषा क्षेत्रों के अलावा भी ख्याति अर्जित हुई है तथा दिन पर दिन हिन्दी बोलने तथा हिन्दी समझने वालों की सँख्या में वृद्धि हुई है।

सन् १६६६ के विश्व जनसँख्या के सर्वेक्षणों द्वारा प्राप्त आँकड़ों से यह ज्ञात हुआ, कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी बोलने वालों की सँख्या सर्वोपरि है। (विश्व में हिन्दी प्रथम स्थान पर डॉ० जयन्ती नौटियाल-राजभाषा चेतना (शोध अर्द्धवार्षिकी) अक्टूबर २००१ उज्जैन) जो कि भारत समेत १३२ देशों में बोली जाती है।

आज प्रत्येक हिन्दी प्रेमी के मन में हिन्दी भाषा को लेकर गर्वोक्तिपूर्ण विचार पैर पसारने लगे हैं, और हिन्दी जन 'विश्वभाषा-हिन्दी' का सपना देखने लगे हैं। हालाँकि बहुभाषी इन्टरनेट पर संयुक्त राष्ट्रसंघ की ओर से आयोजित एक समारोह में, इस बात का अनुमान जताया गया कि 'वर्ल्ड वाईड वेब' पर २००३ तक एक तिहाई उपयोक्ता अँग्रेज़ी से हटकर होंगे और २००७ तक चीनी भाषा - मंडेरियन का कब्जा इंटरनेट पर होगा। (कम्प्यूटर संसूचना, जनवरी २००२)

हम जानते हैं कि सपने सत्य नहीं होते कि यदि विचार कौंधने पर सही दिशा में कर्म किया जाये तो सपने साकार हो जाते हैं। तात्पर्य यह कि वर्तमान परिवेश में हिन्दी भाषा को विश्वभाषा के रूप में देखना सम्भव नहीं हो पा रहा है। लेकिन एक सत्य यह भी है कि १८५७ में नई चाल में ढली हिन्दी अपने प्रगति-पथ पर बढ़ रही है। तात्पर्य यह कि विश्वफलक पर अपना प्रचार-प्रसार, पहचान आदि के लिए आधुनिक युग के महत्त्वपूर्ण माध्यम कम्प्यूटर की इन्टरनेट प्रणाली पर हिन्दी ने अपने पाँव पसारने प्रारम्भ कर

दिये हैं, किन्तु सही प्रस्तोता के अभाव में उसकी क्षमताऐं निखर कर नहीं आ पायी हैं। अर्थात् हिन्दी भाषा साहित्य को विश्व से परिचित कराने के लिए अभी हमें लम्बा रास्ता तय करना है।

सुखद यह है कि संयोगवश कुछ हाथ हिन्दी के संरक्षण और प्रचार के लिए बढ़े हैं। आवश्यकता है, उन्हें मजबूती देने की। यह जानना भी आवश्यक हैं कि 'इन्टरनेट' पर सबसे अधिक प्रभावी भाषा अँग्रेज़ी है। कारण यह है कि उसके पास सूचनाओं का अपार अम्बार और प्रयोक्ता है। जिससे व्यवसायिक दृष्टि से वह भाषा लोगों को आकर्षित करने में सफल है। इसके ठीक विपरीत हिन्दी भाषा में उपलब्ध सामग्री, सूचनाऐं और प्रयोक्ताओं का समूह सीमित है, जिससे हिन्दी भाषा का बाजार इन्टरनेट पर मंदा दिखाई पड़ता है।

इलॅक्ट्रानिक मीडिया में जब हम हिन्दी को देखते हैं कि हिन्दी अपनी जगह खुद बना रही है, हिन्दी का विश्वभाषा के रूप में बढ़ना इस बात का प्रमाण है कि अँग्रेजी वर्चस्व के बीच अपनी जगह बनाना वाकई बड़ी बात है। आज की तारीख में हिन्दी के लिये सबसे अहम बातों में से यह बात भी है कि अपने देश में हिन्दी कार्पोरेट जगत की जुबान बन रही है, ऐसी कोई बहुराष्ट्रीय कम्पनी नहीं है जो हिन्दी में विज्ञापन बनाये बिना अपना उत्पाद बेच लेती हो, कार्पोरेट जगत ने हिन्दी को जगह नहीं दी, हिन्दी ने अपनी पैठ खुद बनाई है। हिन्दी आज देश की धड़कन, लोगों की जरूरत बनकर उभर रही है। जहाँ चैनलों की चकाचौंध ने तो हिन्दी को एक नया बाजार दिया है, और हिन्दी के कारण जाने कितने लोगों को रोजगार मिला हुआ है। राजभाषा का दर्जा देते समय शायद यह किसी ने सोचा भी न होगा कि हिन्दी में पचास हजार से लेकर पाँच लाख रुपये से अधिक की नौकरियाँ मिल सकेंगी।

हिन्दी के बढ़ते दायरे का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि अँग्रेज़ी वर्चस्व वाले चैनल हिन्दी की तरफ तीव्रगति से बढ़ने लगे हैं धर्म दर्शन, आध्यात्म, बड़े बुजुर्गों के लिये तथा बच्चों के लिए भी हर तरह के मनोरंजक व जानकारी पूरक कार्यक्रम आप को हिन्दी में मिल जायेंगे। यह भी देखने में आ रहा है कि अँग्रेज़ी पढ़े लिखे लोग भी रोज़ी-रोटी के लिए उन हिन्दी-चैनलों की शरण में आते जा रहे हैं। हिन्दी सिनेमा का जादू तो पूरी दुनिया में सिर चढ़कर बोल रहा है, विदेशों में हिन्दी फिल्में खूब पसन्द की जा रही हैं। हिन्दी फिल्मों के बढ़ते कारोबार से इस बात का सहज अंदाजा लगाया जा सकता है कि हिन्दी कितनी जीवन्त भाषा है।

लेकिन अकस्मात्

– राजकुमार कुम्भज

सोचा था
चिंगारी बुझेगी नहीं
विरुद्ध हवा
और एक न एक दिन
जरूर बनेगी दावानल वह
जंगल-विरुद्ध
लेकिन अकस्मात् बारिश हो आई
और सब कुछ बह गया
बाढ़ में

बमों से खेलना

बमों से खेलना
बच्चों का काम नहीं है
यह काम तो है सचमुच उनका
जो खेलते हैं बच्चों से

इन दिनों में अब

इन दिनों में अब
इन दिनों में फुर्सत नहीं मिलती
कोई मिलता भी है अगर कहीं किसी से
किसी फुर्सत में
तो फुर्सत की आवाज़ नहीं मिलती
आख़िर कहाँ गया फुर्सत का वह विस्फोट
जिसमें अगर कहीं कोई एक
सुई भी चुभती थी तो
हो जाता था धमाका।

वेदना

-रविन्द्र भट्टल
अनु० - श्रीमती मनु शर्मा "सोहल"

(मूल पँजाबी कविता का हिन्दी अनुवाद)

यदि तूने पानी में
मिट जाना था ऐसे ही बताशे सी,
यदि तूने आक-बुढ़िया के रेशे सी
दूर ही चली जाना था
तो मेरे घर की दहलीज के भीतर
क्यों रखे थे कदम बनके महक ?

गर पता होता मुझे, तो मैंने उस दिन
नहीं डूबने देना था सूरज
गर मुझे मिल गई होती भनक कहीं से
कि रात का अन्धेरा निगल जाएगा तुझे
तो कर देता मैं रौशन अपने मोह का
सूर्य-सा दीपक
दे देता ज़रब उन सारी सड़कों को
और रोक देता नदियों के बहाव।

ओ मेरी नन्हीं मासूम कली
क्यों ओढ़ ली थी तूने
संताप की इक उदास सी चुनरी
खिलने से पहले ही ?
लपेट लिया था क्यों
अपने पैरों में चक्रवात
मैं तो खरीद लेता तेरे लिए
शाही-बगीचों की बहार
जहाँ तू खिलती गाती ओ' नाचती

लेकिन मन की बात तूने
दबा ली अपनी नाजुक पँखुड़ियों में।
आ मेरी महक, यूँ रूठ के ना जा
आ फिर मेरी हथेली पे
बाँध कलीरे तेरी कलाई में
अपने हाथों तुझको विदा करने का
कड़वा सा घूँट भरना चाहता हूँ
आ, बनाकर तुझे परदेसिन
आँसुओं की यमुना सी बहाना चाहता हूँ
और फिर चोरी-चोरी नहीं बल्कि स्वप्न सी
लगा लेना तू उसमें जल-समाधि।

अब मेरे हाथ
नहीं पहुँचते तुझ तक
कैसे दुलारूँ मैं तेरे तपते हुए माथे को
सराहूँ कैसे तेरी नीली आँखों को
ए मेरी अधखिली कली
मुझे बता तो जा
जो तूने पानी में...............

किताब

-रविन्द्र भट्टल
अनु० - श्रीमती मनु शर्मा "सोहल"

(मूल पँजाबी कविता का हिन्दी अनुवाद)

खुले शैल्फ़ पर पड़ी किताब हूँ मैं
कोई लक्ष्मण-रेखा नहीं मेरे इर्द-गिर्द
कोई आए चुपके से
लांघे रेखा अपनी बेबसी की
मुझे उठाए और पढ़े
मैंने कब किया है इन्कार ?

यूँ मेरे साथ
घटता रहा हमेशा, कुछ अजीब सा ही
मसलन कोई आया बड़ी जल्दी में
और चल दिया देख टाइटल ही
एक वह भी था
जिसने लम्बी अंगुलियों से पलटे पृष्ठ
और बस रख दिया ठप्प से वापिस,
उठाया किसी ने बेदिली के साथ
पढ़ा कोई-कोई पृष्ठ
और फैंक गया बेतरतीब सा
किसी ने देखी सिर्फ़ कीमत
और किसी ने मात्र नाम प्रकाशक का।

महज़ किताब नहीं
किताब के पृष्ठों में
भावनाओं औ' अहसासों का
उमड़ता हुआ दरिया भी हूँ मैं,
पर पहले पृष्ठ से आखिरी तक
उतर जाए जो कोई मेरे भीतर,
शब्द-दर-शब्द
ऐसा कोई ना आया।

पृष्ठों में खो कर
लहरों में बहने वाला
नहीं पहुँच सका मुझ तक
उसी सनकी की प्रतीक्षा कर रहा हूँ मैं
जो इबादत की अदा में उठाए मुझे
और फिर रख के सीने पर
पी जाए मेरा अक्षर-अक्षर,
कि खुले शैल्फ़ पर पड़ी किताब हूँ मैं।

अंजुरि भर आकाश

- निदा नवाज़

नींद की गोलियाँ खाकर
आज भी सोते हैं वे लोग
रात की फटी पुरानी चादर ओढ़े
बिखरे सपनों को तलाशते
जहाँ उनके हाथ आता है
बिन चाँद तारों का
एक अंजुरि भर आकाश
और एक सूना सा
आँख भर सागर
जब वे उतरते हैं
दिन के आग उगलते अलाव में
जल जाता है
उनका आकाश
और सूख जाती है हर बूँद
उनके सागर की
नहीं सँभाल सकती है उन्हें
रात की फटी पुरानी चादरें
और न ही दिन का
दहकता अलाव

"कोयल" पुलवामा
कश्मीर-192301

युवा हिन्दी लेखक संघ के प्रकाशन

कविता

1.	चौराहे पर खड़े बारह चेहरे	सं० जवाहर रैणा	40.00
2.	सेतुओं की खोज	डॉ० ओम प्रकाश गुप्त	40.00
3.	डूबे हुए सूरज की तलाश	अशोक कुमार	40.00
4.	फिर मुझे पहचान	डॉ० ओम प्रकाश गुप्त	60.00
5.	साथ चलने का संगीत	सं० अशोक कुमार	40.00
6.	दूब पर खिली धूप	सं० अरुण कुमार बजाज जय कुमार	(प्रकाश्य)
7.	यकीन मानो मैं आऊँगा	मनोज शर्मा	100.00
8.	सच तो अब भी यही है	अरुण कुमार बजाज़	60.00
9.	समय के धागे	शेख मोहम्मद कल्याण	100.00

कहानी

10.	प्रिज़्मों में बटी किरणें	सं० जवाहर रैणा, विजय कुमार	30.00
11.	अभिव्यक्त होने दो	सं० डॉ० राज कुमार	50.00
12.	कितिज लौट आएगी	शकुन्त दीपमाला	60.00

आलोचना

13.	मिथक सर्जक कल्पना बर-अक्स सांस्कृतिक सरोकार	डॉ० राज कुमार	150.00
14.	साहित्य का सांस्कृतिक पक्ष	डॉ० नीलम सराफ	60.00
15.	गुंजलक पूर्ण कथा परिदृश्य	डॉ० अनिल गोयल	150.00
16.	सांस्कृतिक सरणियाँ और चिंतन दिशाएं	डॉ० देवराज बाली	150.00
17.	समकालीन कविता	सं० अशोक कुमार	30.00
18.	हिन्दी साहित्य में देवी पूजा के विविध रूप	डॉ० परमेश्वरी शर्मा	60.00

दर्शन

19.	मानववाद की भारतीय और पाश्चात्य परंपरा	डॉ० देवराज बाली	60.00

लोकवार्ता

20.	डोगरी लोकगाथाओं के अभिप्राय	डॉ० परमेश्वरी शर्मा सुरेखा बख्शी	60.00

युवा हिन्दी लेखक संघ (रजि०) ढक्की सराजां, जम्मू की ओर से डॉ० ओम प्रकाश गुप्त द्वारा वैली प्रिंटर्ज़, जानीपुर जम्मू से मुद्रित तथा युवा हिन्दी लेखक संघ, ढक्की सराजां जम्मू से प्रकाशित।

मुख्य सम्पादक : डॉ० ओम प्रकाश गुप्त
सम्पादक : शेख मोहम्मद 'कल्याण'

साभार :-

इस पत्रिका के प्रकाशनार्थ, जम्मू-कश्मीर राज्य की कला, संस्कृति तथा साहित्य अकादमी से आर्थिक सहायता प्राप्त हुई है किन्तु इस में प्रकाशित सामग्री के लिए अकादमी उत्तरदायी नहीं है।

कम्प्यूटर टाइप-सैटिंग/डिज़ाईनिंग :-

साथी क्रिएशन्ज़ : (DTP Service) जानीपुर जम्मू